सम्पूर्ण सुन्दरकाण्ड पाठ

क्या है "सुन्दर कांड " ?

“सुन्दर कांड” – श्री राम चरित मानस का 5 वा अध्याय/कांड है। सुन्दर कांड को सबसे पहले रामायण में श्री वाल्मीकि जी ने संस्कृत में लिखा था। बाद में तुलसी दस जी ने जब श्री राम चरित मानस लिखी, तो सुन्दर कांड का अवधी भाषा वाला रूप हम सब के सामने आया जो की सबसे प्रचलित है| सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी का सीता माता को खोजने के लिए की गयी लंका यात्रा का सम्पूर्ण मनमोहक बखान किया गया है।

“सुन्दर कांड” में हनुमान जी का यशोगान किया गया है। जहाँ सम्पूर्ण रामायण में श्री राम के सूंदर स्वरुप, उनके जीवन काल, स्वभाव, आदर्शों का गुण गान किया गया है वहीँ सुन्दरकांड एक ऐसा भाग है जो सिर्फ हनुमान जी की वीरता का बखान करता है। सुन्दर कांड हनुमान जी पर केंद्रित सबसे पुरानी रचना है। ऐसा माना जाता है के सुन्दरकाण्ड के पाठ से सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

जानिए क्यों कहते हैं इसे - "सुन्दर कांड " ?

हनुमानजी नें अपनी बुद्धि और बल से सीता की खोज की है। इसी वजह से सुंदरकांड को हनुमानजी की सफलता के लिए याद किया जाता है। हनुमान जी सीता माता की खोज में लंका गए थे। लंका के सुंदर पर्वत में ही अशोक वाटिका थी जहाँ हनुमान जी के भेंट सीता माता से हुई थी। इसी वजह से इस भाग का नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा। हालाँकि एक किवदंती के अनुसार एक मत यह भी है के हनुमान जी की माता उन्हें प्यार से “सुंदरा” कहकर पुकारती थीं इसीलिए वाल्मीकि जी ने इस भाग का नाम सुन्दरकाण्ड रखना ही सही समझा।

"सुन्दर कांड " के फायदे

यह कहा जाता है कि चालीस सप्ताह तक लगातार जो कोई श्रद्धापूर्वक सुन्दर कांड का पाठ करता है, तो उसके सभी मनोरथ पूरे होते हैं तथा जीवन के सभी कष्ट, दुःख, परेशानियाँ दूर हो जाती हैं ।कई ज्योतिषी भी विपरित परिस्थितियों में सुंदरकांड करने की ही सलाह देते हैं। यदि किसी व्यक्ति के जीवन में अत्यधिक परेशानियां हो तथा कोई काम नहीं बन पा रहा है, आत्मविश्वास की कमी हो तो सुंदरकांड के पाठ से शुभ फल प्राप्त होता है।

सुन्दर कांड

हनुमानजी वानरों को समझाते है

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई॥1॥

सुहाए सूंदर, अच्छे लगने वाले, शोभित | परिखेहु – राह देखना, प्रतीक्षा करना

जाम्बवान के (सुन्दर, सुहावने) वचन सुनकर
हनुमानजी को अपने मन में वे वचन बहुत अच्छे लगे॥

और हनुमानजी ने कहा की हे भाइयो!
आप लोग कन्द, मूल व फल खाकर समय बिताना, और
तब तक मेरी राह देखना,
जब तक कि मैं सीताजी का पता लगाकर लौट ना आऊँ,
जब तक मै सीताजी को देखकर लौट न आऊँ॥1॥

श्रीराम का कार्य करने पर मन को ख़ुशी मिलती है

जब लगि आवौं सीतहि देखी।
होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी॥
यह कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा।
चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा॥2॥
हरष – ख़ुशी, हर्ष | बिसेषी – अधिक, विशेष | माथा – मस्तक | हिय – ह्रदय

जब मै सीताजीको देखकर लौट आऊंगा,
तब कार्य सिद्ध होने पर मन को बड़ा हर्ष होगा॥

यह कहकर और सबको नमस्कार करके,
रामचन्द्रजी का ह्रदय में ध्यान धरकर,
प्रसन्न होकर हनुमानजी लंका जाने के लिए चले॥2॥

हनुमानजी ने एक पहाड़ पर भगवान् श्रीराम का स्मरण किया

सिंधु तीर एक भूधर सुंदर।
कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर॥
बार-बार रघुबीर सँभारी।
तरकेउ पवनतनय बल भारी॥3॥
सिन्धु – समुद्र | भूधर- पृथ्वी को धारण करने वाला अर्थात पर्वत | कौतुक – खेल से, आसानी से | सँभारी – याद करके | तरकेउ – गर्जना की | बलभारी – भारीबलवाले या बल भारी – भारी बल से, बड़े वेग से

समुद्र के तीर पर एक सुन्दर पहाड़ था।
हनुमान् जी खेल से ही (अनायास ही, कौतुकी से) कूदकर
उसके ऊपर चढ़ गए॥

फिर वारंवार रामचन्द्रजी का स्मरण करके,
बड़े पराक्रम के साथ हनुमानजी ने गर्जना की॥

हनुमानजी श्रीराम के बाण जैसे तेज़ गति से लंका की ओर जाते है

जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता।
चलेउ सो गा पाताल तुरंता॥
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना।
एही भाँति चलेउ हनुमाना॥4॥
जेहिं – जिस | गिरि – पर्वत | जिमि – जैसे | अमोघ – अचूक | रघुपति कर बाना – श्रीराम के बाण

जिस पहाड़ पर हनुमानजी ने पाँव रखे थे
(जिस पर से वे उछले),
वह पहाड़ तुरंत पाताल के अन्दर चला गया॥

और जैसे श्रीरामचंद्रजी का अमोघ बाण जाता है,
ऐसे हनुमानजी वहा से लंका की ओर चले॥

मैनाक पर्वत का प्रसंग

समुद्र ने मैनाक पर्वत को हनुमानजी की सेवा के लिए भेजा

जलनिधि रघुपति दूत बिचारी।
तैं मैनाक होहि श्रम हारी॥5॥

जलनिधि – समुद्र | श्रमहारी – थकान को हरने वाला | तैं – तू (कही कही पर “तैं” इसके स्थान पर “कह” का प्रयोग किया है)

समुद्र ने हनुमानजी को श्रीराम का दूत जानकर
मैनाक नाम पर्वत से कहा की –
हे मैनाक, तू इनकी थकावट दूर करने वाला हो,
इनको ठहरा कर श्रम मिटानेवाला हो,
(अर्थात् अपने ऊपर इन्हे विश्राम दे)॥

मैनाक पर्वत हनुमानजी से विश्राम करने के लिए कहता है

सिन्धुवचन सुनी कान, तुरत उठेउ मैनाक तब।
कपिकहँ कीन्ह प्रणाम, बार बार कर जोरिकै॥
सिन्धुवचन – समुद्रके वचन | कर – हाथ | जोरिकै – जोड़कर

समुद्रके वचन कानो में पड़तेही
मैनाक पर्वत वहांसे तुरंत ऊपर को उठ गया,

जिससे हनुमानजी उसपर बैठकर थोड़ी देर आराम कर सके।
और हनुमानजीके पास आकर, वारंवार हाथ जोड़कर, उसने हनुमानजीको प्रणाम किया॥

दोहा – 1

प्रभु राम का कार्य पूरा किये बिना विश्राम नही

हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥1॥
तेहि – उसको | परसा – स्पर्श किया, छुआ | कर – हाथ | पुनि – पुनः, फिर | मोहि – मुझको

हनुमानजी ने उसको अपने हाथसे छुआ,
फिर उसको प्रणाम किया, और कहा की –
रामचन्द्रजीका का कार्य किये बिना मुझको विश्राम कहाँ? ॥1॥
श्री राम का कार्य जब तक पूरा न कर लूँ,
तब तक मुझे आराम कहाँ?
श्री राम, जय राम, जय जय राम

सुरसा का प्रसंग

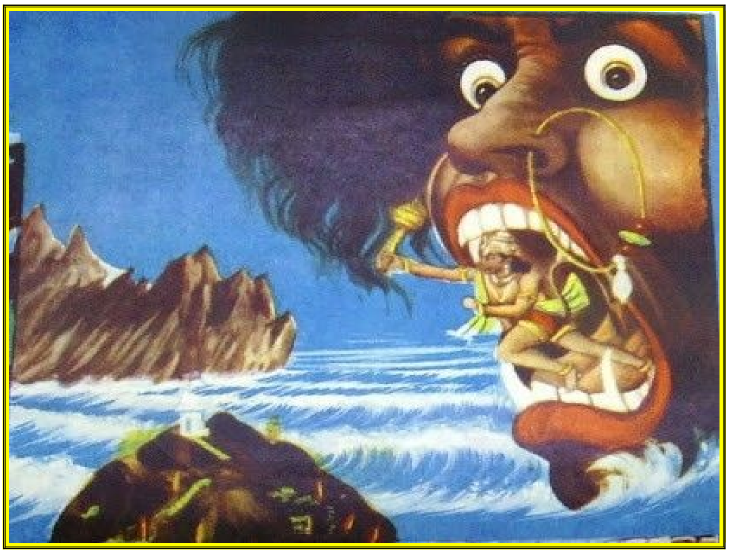

देवताओं ने नागमाता सुरसा को भेजा

जात पवनसुत देवन्ह देखा।
जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा॥
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता।

पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता॥1॥

जानैं कहुँ – जानने के लिए | बिसेषा – विशेष, अधिक | अहिन्ह कै – सर्पों की | पठइन्हि – भेजा, प्रस्थापित | बाता – वार्ता

देवताओ ने पवनपुत्र हनुमान् जी को जाते हुए देखा और
उनके बल और बुद्धि के वैभव को जानने के लिए॥

देवताओं ने नाग माता सुरसा को भेजा।
उस नागमाताने आकर हनुमानजी से यह बात कही॥

सुरसा ने हनुमानजी का रास्ता रोका

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा।
सुनत बचन कह पवनकुमारा॥
राम काजु करि फिरि मैं आवौं।
सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं॥2॥

सुरन्ह – देवताओं ने | अहारा – आहार, भोजन | फिरि आवउँ – लौट आऊँ | सुधि – शोध, खबर, समाचार

आज तो मुझको देवताओं ने यह अच्छा आहार दिया।
यह बात सुन, हँस कर हनुमानजी बोले॥

मैं रामचन्द्रजी का काम करके लौट आऊँ और
सीताजी की खबर रामचन्द्रजी को सुना दूं॥

हनुमानजी ने सुरसा को समझाया कि वह उनको नहीं खा सकती

तब तव बदन पैठिहउँ आई।
सत्य कहउँ मोहि जान दे माई॥
कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना।
ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना॥3॥

तव – तेरा | पैठिहउँ – प्रवेश कर लूंगा | कवनेहुँ – किसी भी | जतन – यत्न, युक्ति | ग्रससि – निगलना

फिर हे माता! मै आकर आपके मुँह में प्रवेश करूंगा।
अभी तू मुझे जाने दे। इसमें कुछ भी फर्क नहीं पड़ेगा।
मै तुझे सत्य कहता हूँ॥

जब सुरसा ने किसी उपायसे उनको जाने नहीं दिया,
तब हनुमानजी ने कहा कि,
तू क्यों देरी करती है? तू मुझको नही खा सकती॥

सुरसा ने कई योजन मुंह फैलाया, तो हनुमानजी ने भी शरीर फैलाया

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा।
कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा॥
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ।
तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ॥4॥

सुरसाने अपना मुंह, एक योजनभरमें (चार कोस मे) फैलाया।
हनुमानजी ने अपना शरीर, उससे दूना यानी दो योजन विस्तारवाला किया॥
सुरसा ने अपना मुँह सोलह (16) योजनमें फैलाया।
हनुमानजीने अपना शरीर तुरंत बत्तीस (32) योजन बड़ा किया॥

सुरसा ने मुंह सौ योजन फैलाया तो हनुमानजी ने छोटा सा रूप धारण किया

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा।
तासु दून कपि रूप देखावा॥
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा।
अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा॥5॥

सुरसा ने जैसे-जैसे मुख का विस्तार बढ़ाया, जैसा जैसा मुंह फैलाया,
हनुमानजी ने वैसे ही अपना स्वरुप उससे दुगना दिखाया॥
जब सुरसा ने अपना मुंह सौ योजन (चार सौ कोस का) में फैलाया,
तब हनुमानजी तुरंत बहुत छोटा स्वरुप धारण कर लिया॥

सुरसा को हनुमानजी की शक्ति का पता चला

बदन पइठि पुनि बाहेर आवा।
मागा बिदा ताहि सिरु नावा॥
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा।
बुधि बल मरमु तोर मैं पावा॥6॥

छोटा स्वरुप धारण कर हनुमानजी,
सुरसाके मुंहमें घुसकर तुरन्त बाहर निकल आए।
फिर सुरसा से विदा मांग कर हनुमानजी ने प्रणाम किया॥

उस वक़्त सुरसा ने हनुमानजी से कहा की –
हे हनुमान! देवताओंने मुझको जिसके लिए भेजा था,
वह तुम्हारे बल और बुद्धि का भेद, मैंने अच्छी तरह पा लिया है॥

दोहा – **2**

सुरसा हनुमानजी को प्रणाम करके चली जाती है

राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान ॥2॥

तुम बल और बुद्धि के भण्डार हो,
सो श्रीरामचंद्रजी के सब कार्य सिद्ध करोगे।

ऐसे आशीर्वाद देकर, सुरसा तो अपने घर को चली,
और हनुमानजी प्रसन्न होकर, लंकाकी ओर चले ॥2॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

मायावी राक्षस का प्रसंग

समुद्र में छाया पकड़ने वाला राक्षस

निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई।
करि माया नभु के खग गहई॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं।
जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं॥1॥

समुद्र के अन्दर एक राक्षस रहता था।
वह माया करके आकाश मे उड़ते हुए पक्षी और जंतुओको पकड़ लिया करता था॥

जो जीवजन्तु आकाश में उड़कर जाता,
उसकी परछाई जल में देखकर परछाई को जल में पकड़ लेता॥

हनुमानजी ने मायावी राक्षस के छल को पहचाना

गहइ छाहँ सक सो न उड़ाई।
एहि बिधि सदा गगनचर खाई॥
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा।
तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा॥2॥

परछाई को जल में पकड़ लेता,
जिससे वह जिव जंतु फिर वहा से सरक नहीं सकता।
इस तरह वह हमेशा, आकाश मे उड़ने वाले जिवजन्तुओ को खाया करता था॥
उसने वही कपट हनुमान् जी से किया।
हनुमान् जी ने उसका वह छल तुरंत पहचान लिया॥

हनुमानजी समुद्र के पार पहुंचे

ताहि मारि मारुतसुत बीरा।
बारिधि पार गयउ मतिधीरा॥
तहाँ जाइ देखी बन सोभा।
गुंजत चंचरीक मधु लोभा॥3॥

धीर बुद्धिवाले पवनपुत्र वीर हनुमानजी
उसे मारकर समुद्र के पार उतर गए॥
वहा जाकर हनुमानजी वन की शोभा देखते है कि
भँवरे मधु (पुष्प रस) के लोभसे गुंजार कर रहे है॥

हनुमानजी लंका पहुंचे

नाना तरु फल फूल सुहाए।
खग मृग बृंद देखि मन भाए॥
सैल बिसाल देखि एक आगें।
ता पर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें॥4॥

अनेक प्रकार के वृक्ष, फल और फूलोसे शोभायमान हो रहे है।
पक्षी और हिरणोंका झुंड देखकर तो वे मन मे बहुत ही प्रसन्न हुए॥
वहां सामने हनुमानजी एक बड़ा विशाल पर्वत देखकर,
निर्भय होकर उस पहाड़पर कूदकर चढ़ बैठे॥

भगवान् शंकर पार्वतीजी को श्रीराम की महिमा बताते है

उमा न कछु कपि कै अधिकाई।
प्रभु प्रताप जो कालहि खाई॥
गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी।
कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी॥5॥

भगवान् शंकर पार्वतीजी से कहते है कि
हे पार्वती! इसमें हनुमान की कुछ भी अधिकता नहीं है।
यह तो केवल रामचन्द्रजीके ही प्रताप का प्रभाव है कि,
जो काल को भी खा जाता है॥
पर्वत पर चढ़कर हनुमानजी ने लंका को देखा,
तो वह ऐसी बड़ी दुर्गम है की,
जिसके विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता॥

लंका नगरी का वर्णन

लंका नगरी और उसके सुवर्ण कोट का वर्णन

अति उतंग जलनिधि चहु पासा।
कनक कोट कर परम प्रकासा॥6॥

पहले तो वह बहुत ऊँची है,
फिर उसके चारो ओर समुद्र की खाई।
उसपर भी ससोने के परकोटे (चार दीवारी) का तेज प्रकाश
कि जिससे नेत्र चकाचौंध हो जाए॥

छन्द **1**

लंका नगरी और उसके महाबली राक्षसों का वर्णन

कनक कोटि बिचित्र मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत नहिं बनै॥

उस नगरीका रत्नों से जड़ा हुआ, सुवर्ण का कोट, अतिव सुन्दर बना हुआ है।
चौहटे, दुकाने व सुन्दर गलियों के बहार, उस सुन्दर नगरी के अन्दर बनी है॥

जहा हाथी, घोड़े, खच्चर, पैदल व रथोकी गिनती कोई नहीं कर सकता।
और जहा महाबली, अद्भुत रूपवाले राक्षसोके सेनाके झुंड इतने है कि जिसका वर्णन किया नहीं जा सकता॥

छन्द **2**

लंका के बाग-बगीचों का वर्णन

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापीं सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं॥
कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहुबिधि एक एकन्ह तर्जहीं॥

जहा वन, बाग़, बागीचे, बावडिया, तालाब, कुएँ, बावलिया शोभायमान हो रही है।
जहां मनुष्यकन्या, नागकन्या, देवकन्या और गन्धर्वकन्याये विराजमान हो रही है – जिनका रूप देखकर, मुनिलोगोका मन मोहित हुआ जाता है॥

कही पर्वत के समान बड़े विशाल देहवाले महाबलिष्ट, मल्ल गर्जना करते है और
अनेक अखाड़ों में अनेक प्रकारसे भिड रहे है और एक एकको आपस में पटक पटक कर गर्जना कर रहे है॥

छन्द **3**

लंका के राक्षसों का बुरा आचरण

करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु एक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही॥

जहां कही विकट शरीर वाले करोडो भट,
चारो तरफसे नगरकी रक्षा करते है और
कही वे राक्षस लोग, भैंसे, मनुष्य, गौ, गधे,
बकरे और पक्षीयोंको खा रहे है॥

राक्षस लोगो का आचरण बहुत बुरा है।

इसीलिए तुलसीदासजी कहते है कि
मैंने इनकी कथा बहुत संक्षेपसे कही है।

ये महादुष्ट है, परन्तु रामचन्द्रजीके बानरूप पवित्र तीर्थनदीके अन्दर
अपना शरीर त्यागकर, गति अर्थात मोक्षको प्राप्त होंगे॥

दोहा – **3**

हनुमानजी छोटा सा रूप धरकर लंका में प्रवेश करने का सोचते है

पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरों निसि नगर करौं पइसार ॥3॥

हनुमानजी ने बहुत से रखवालो को देखकर मन में विचार किया की
मै छोटा रूप धारण करके नगर में प्रवेश करूँ ॥3॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

लंकिनी का प्रसंग और ब्रह्माजी का वरदान

हनुमानजी राम नामका स्मरण करते हुए लंका में प्रवेश करते है

मसक समान रूप कपि धरी।
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी॥
नाम लंकिनी एक निसिचरी।
सो कह चलेसि मोहि निंदरी॥1॥

हनुमानजी मच्छर के समान छोटा-सा रूप धारण कर,
प्रभु श्री रामचन्द्रजी के नाम का सुमिरन करते हुए लंका में प्रवेश करते है॥

लंकिनी, हनुमानजी का रास्ता रोकती है
लंका के द्वार पर लंकिनी नाम की एक राक्षसी रहती थी।
हनुमानजी की भेंट, उस लंकिनी राक्षसी से होती है।
वह पूछती है कि,
मेरा निरादर करके (बिना मुझसे पूछे) कहा जा रहे हो?

हनुमानजी लंकिनी को घूँसा मारते है

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा।
मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥
मुठिका एक महा कपि हनी।
रुधिर बमत धरनीं ढनमनी॥2॥

तूने मेरा भेद नहीं जाना?
जहाँ तक चोर हैं, वे सब मेरे आहार हैं॥
महाकपि हनुमानजी उसे एक घूँसा मारते है,
जिससे वह पृथ्वी पर लुढक पड़ती है।

लंकिनी हनुमानजी को प्रणाम करती है

पुनि संभारि उठी सो लंका।
जोरि पानि कर बिनय ससंका॥
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा।
चलत बिरंच कहा मोहि चीन्हा॥3॥

वह राक्षसी लंकिनी, अपने को सँभालकर फिर उठती है।
और डर के मारे हाथ जोड़कर हनुमानजी से कहती है॥

लंकिनी, हनुमानजी को, ब्रह्माजी के वरदान के बारे में बताती है
जब ब्रह्मा ने रावण को वर दिया था,
तब चलते समय उन्होंने राक्षसों के विनाश की यह पहचान मुझे बता दी थी कि॥

ब्रह्माजी के वरदान में राक्षसों के संहार का संकेत

बिकल होसि तैं कपि कें मारे।
तब जानेसु निसिचर संघारे॥
तात मोर अति पुन्य बहूता।
देखेउँ नयन राम कर दूता॥4॥

जब तू बंदर के मारने से व्याकुल हो जाए,
तब तू राक्षसों का संहार हुआ जान लेना।

हनुमानजी के दर्शन होने के कारण, लंकिनी खुदको भाग्यशाली समझती है
हे तात! मेरे बड़े पुण्य हैं,
जो मैं श्री रामजी के दूत को अपनी आँखों से देख पाई।

दोहा – 4

थोड़े समय का सत्संग स्वर्ग के सुख से बढ़कर है

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ॥4॥

हे तात!, स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को
तराजू के एक पलड़े में रखा जाए,
तो भी वे सब मिलकर (दूसरे पलड़े पर रखे हुए)
उस सुख के बराबर नहीं हो सकते,
जो क्षण मात्र के सत्संग से होता है ॥4॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

प्रभु श्रीराम को निरंतर स्मरण करने के फायदे

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा।
हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई।
गोपद सिंधु अनल सितलाई॥1॥

अयोध्यापुरी के राजा रघुनाथ को हृदय में रखे हुए
नगर में प्रवेश करके सब काम कीजिए॥
उसके लिए,अर्थात, जिसके मन में श्री राम का स्मरण रहता है,
विष अमृत हो जाता है,
शत्रु मित्रता करने लगते हैं,
समुद्र गाय के खुर के बराबर हो जाता है,
अग्नि में शीतलता आ जाती है॥

हनुमानजी का लंका में प्रवेश

हनुमानजी, छोटा सा रूप धरकर, लंका में प्रवेश करते है

गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही।
राम कृपा करि चितवा जाही॥
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना।
पैठा नगर सुमिरि भगवाना॥2॥

और हे गरूड़जी! जिसे राम ने एक बार कृपा करके देख लिया,
उसके लिए सुमेरु पर्वत रज के समान हो जाता है॥

तब हनुमानजी ने बहुत ही छोटा रूप धारण किया,
और भगवान का स्मरण करके नगर में प्रवेश किया॥

हनुमानजी रावण के महल तक पहुंचे

मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा।
देखे जहँ तहँ अगनित जोधा॥
गयउ दसानन मंदिर माहीं।
अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं॥3॥

उन्होंने एक-एक (प्रत्येक) महल की खोज की।
जहाँ-तहाँ असंख्य योद्धा देखे॥

फिर वे रावण के महल में गए।
वह अत्यंत विचित्र था, जिसका वर्णन नहीं हो सकता॥

हनुमानजी सीताजी की खोज करते करते विभीषण के महल तक पहुंचे

सयन किएँ देखा कपि तेही।
मंदिर महुँ न दीखि बैदेही॥
भवन एक पुनि दीख सुहावा।
हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा॥4॥

हनुमानजी ने, महल में रावण को सोया हुआ देखा।
वहां भी हनुमानजी ने सीताजी की खोज की,
परन्तु सीताजी उस महल में कही भी दिखाई नहीं दीं॥
फिर उन्हें एक सुंदर महल दिखाई दिया।
उस महल में भगवान का एक मंदिर बना हुआ था॥

दोहा – 5

विभीषण के महल का वर्णन श्रीराम के चिन्ह और तुलसी के पौधे

रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराई ॥5॥

वह महल श्री राम के आयुध (धनुष-बाण) के चिह्नों से अंकित था,
उसकी शोभा वर्णन नहीं की जा सकती॥

वहाँ नवीन-नवीन तुलसी के वृक्ष-समूहों को देखकर
कपिराज हनुमान हर्षित हुए॥ 5॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

हनुमानजी और विभीषण का संवाद

राक्षसों की नगरी में सत-पुरुष को देखकर हनुमानजी को आश्चर्य हुआ

लंका निसिचर निकर निवासा।
इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा॥
मन महुँ तरक करैं कपि लागा।
तेहीं समय बिभीषनु जागा॥1॥

और उन्हीने सोचा की यह लंका नगरी तो राक्षसोंके कुलकी निवासभूमी है,
राक्षसो के समूह का निवास स्थान है।
यहाँ सत्पुरुषो के रहने का क्या काम॥

इस तरह हनुमानजी मन ही मन में विचार करने लगे।

इतने में विभीषण की आँख खुली॥

हनुमानजी विभीषण को राम नाम का जप करते देखते है

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा।
हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा॥
एहि सन सठि करिहउँ पहिचानी।
साधु ते होइ न कारज हानी॥2॥

और जागते ही उन्होंने राम! राम! ऐसा स्मरण किया,
तो हनुमानजीने जाना की यह कोई सत्पुरुष है।
इस बात से हनुमानजीको बड़ा आनंद हुआ॥

सत्पुरुषों से क्यों पहचान करनी चाहिये?
हनुमानजीने विचार किया कि
इनसे जरूर पहचान करनी चहिये,
क्योंकि सत्पुरुषोके हाथ कभी कार्यकी हानि नहीं होती,
बल्कि लाभ ही होता है॥

हनुमानजी ब्राह्मण का रूप धारण करते है

बिप्र रूप धरि बचन सुनाए।
सुनत बिभीषन उठि तहँ आए॥
करि प्रनाम पूँछी कुसलाई।
बिप्र कहहु निज कथा बुझाई॥3॥

फिर हनुमानजीने ब्राम्हणका रूप धरकर वचन सुनाया,
तो वह वचन सुनतेही विभीषण उठकर उनके पास आया॥

और प्रणाम करके कुशल पूँछा कि,
हे ब्राह्मणदेव!, जो आपकी बात हो सो हमें समझाकर कहो
(अपनी कथा समझाकर कहिए)॥

विभीषण हनुमानजी से उनके बारे में पूछते है

की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई।
मोरें हृदय प्रीति अति होई॥
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी।
आयहु मोहि करन बड़भागी॥4॥

विभीषणने कहा कि, क्या आप हरिभक्तो मे से कोई है?
क्योंकि मेरे मनमें आपकी ओर बहुत प्रीती बढती जाती है,
आपको देखकर मेरे हृदय मे अत्यंत प्रेम उमड़ रहा है॥

अथवा मुझको बडभागी करने के वास्ते,
भक्तोपर अनुराग रखनेवाले आप साक्षात दिनबन्धु ही तो नहीं पधार गए हो॥

(अथवा क्या आप दीनो से प्रेम करने वाले स्वयं श्री राम जी ही है,
जो मुझे बड़भागी बनाने, घर-बैठे दर्शन देकर कृतार्थ करने आए है?)

दोहा – **6**

हनुमानजी विभीषण को श्री राम कथा सुनाते है

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम ॥6॥

विभिषणके ये वचन सुनकर
हनुमानजीने रामचन्द्रजीकी सब कथा विभीषणसे कही,
और अपना नाम बताया।

प्रभु राम के नाम स्मरण से, दोनों के मन आनंदित हो जाते है
परस्परकी बाते सुनतेही दोनोंके शरीर रोमांचित हो गए
और श्री रामचन्द्रजीका स्मरण आ जानेसे दोनों आनंदमग्न हो गए ॥6॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

विभीषण हनुमानजी को अपनी स्थिति बताते है

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा।
करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा॥

विभीषण कहते है की – हे हनुमानजी!
हमारी रहनी हम कहते है सो सुनो।
जैसे दांतों के बिचमें बिचारी जीभ रहती है,
ऐसे हम इन राक्षसोंके बिच में रहते है॥
हे तात! वे सूर्यकुल के नाथ (रघुनाथ),
मुझको अनाथ जानकर कभी कृपा करेंगे?

बिना भगवान् की कृपा के सत्पुरुषों का संग नहीं मिलता

तामस तनु कछु साधन नाहीं।
प्रीत न पद सरोज मन माहीं॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥

जिससे प्रभु कृपा करे ऐसा साधन तो मेरे है नहीं।
क्योंकि मेरा शरीर तो तमोगुणी राक्षस है,
और न कोई प्रभुके चरणकमलों में मेरे मनकी प्रीति है॥
परन्तु हे हनुमानजी, अब मुझको इस बातका पक्का भरोसा हो गया है कि,
भगवान मुझपर अवश्य कृपा करेंगे।
क्योंकि भगवानकी कृपा बिना सत्पुरुषोंका मिलाप नहीं होता॥

हनुमानजी द्वारा प्रभु श्री राम के गुणों का वर्णन
प्रभु श्री राम भक्तों पर सदा दया करते है
जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा।
तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा॥
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीति॥

रामचन्द्रजी ने मुझपर कृपा की है।
इसीसे आपने आकर मुझको दर्शन दिए है॥
विभीषणके यह वचन सुनकर हनुमानजीने कहा कि, हे विभीषण! सुनो,
प्रभुकी यह रीतीही है की वे सेवकपर सदा परमप्रीति किया करते है॥

हनुमानजी कहते है, श्री राम ने वानरों पर भी कृपा की है

कहहु कवन मैं परम कुलीना।
कपि चंचल सबहीं बिधि हीना॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा।
तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥

हनुमानजी कहते है की कहो मै कौनसा कुलीन पुरुष हूँ।
हमारी जाति देखो (चंचल वानर की),
जो महाचंचल और सब प्रकारसे हीन गिनी जाती है॥
जो कोई पुरुष प्रातःकाल हमारा (बंदरों का) नाम ले लेवे,
तो उसे उस दिन खाने को भोजन नहीं मिलता॥

दोहा – 7

भगवान् राम के गुणों का भक्तिपूर्वक स्मरण

अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्हीं कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर ॥7॥

हे सखा, सुनो मै ऐसा अधम नीच हूँ।
तिस पर भी रघुवीरने कृपा कर दी,
तो आप तो सब प्रकारसे उत्तम हो॥
आप पर कृपा करे इस में क्या बड़ी बात है।
ऐसे प्रभु श्री रामचन्द्रजी के गुणोंका स्मरण करनेसे
दोनों के नेत्रोमें आंसू भर आये॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

भगवान् को भूलने पर, इंसान के जीवन में दुःख का आना

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी।
फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी॥
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा।
पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा॥

जो मनुष्य जानते बुझते ऐसे स्वामीको छोड़ बैठते है,
वे दूखी क्यों न होंगे?

इस तरह रामचन्द्रजीके परम पवित्र व
कानोंको सुख देने वाले गुणसमूहोंको कहते कहते,
हनुमानजी ने विश्राम पाया,
उन्होने परम (अनिर्वचनीय) शांति प्राप्त की॥

विभीषण हनुमानजी को माता सीता के बारे में बताते है

पुनि सब कथा बिभीषन कही।
जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही॥
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता।
देखी चहउँ जानकी माता॥

फिर विभीषण ने हनुमानजी से वह सब कथा कही कि –
सीताजी जिस जगह, जिस तरह रहती थी।

तब हनुमानजी ने विभीषण से कहा, हे भाई सुनो,
मैं सीता माताको देखना चाहता हूँ॥

अशोकवन का प्रसंग हनुमानजी अशोकवन जाते है

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई।
चलेउ पवनसुत बिदा कराई॥
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ।
बन असोक सीता रह जहवाँ॥

सो मुझे उपाय बताओ।
हनुमानजी के यह वचन सुनकर
विभीषण ने वहांकी सब युक्तियाँ (उपाय) कह सुनाई।
तब हनुमानजी भी विभीषणसे विदा लेकर वहांसे चले॥
फिर वैसाही छोटासा स्वरुप धर कर,
हनुमानजी वहां गए, जहां अशोकवनमें सीताजी रहा करती थी॥

सीताजी का राम के गुणों का स्मरण करना

देखि मनहि महुँ कीन्ह प्रनामा।
बैठेहिं बीति जात निसि जामा॥
कृस तनु सीस जटा एक बेनी।
जपति हृदयँ रघुपति गुन श्रेनी॥

हनुमानजी ने सीताजी का दर्शन करके,
उनको मनही मनमें प्रणाम किया और बैठे।
इतने में एक प्रहर रात्रि बीत गयी॥

हनुमानजी सीताजी को देखते है,
सो उनका शरीर तो बहुत दुबला हो रहा है।
सरपर लटोकी एक वेणी बंधी हुई है।
और अपने मनमें श्री राम के गुणों का जाप (स्मरण) कर रही है॥

दोहा – 8

माता सीता का मन, श्री राम के चरणों में

निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन ॥8॥

और अपने पैरो में दृष्टि लगा रखी है।
मन रामचन्द्रजी के चरणों में लीन हो रहा है।
सीताजीकी यह दीन दशा (दुःख) देखकर,
हनुमानजीको बड़ा दुःख हुआ॥

श्री राम, जय राम, जय जय राम

अशोक वाटिका में रावण और सीताजी का संवाद

रावण का अशोकवन में आना

तरु पल्लव महँ रहा लुकाई।
करइ बिचार करौं का भाई॥
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा।
संग नारि बहु किएँ बनावा॥

हनुमानजी वृक्षों के पत्तो की ओटमें छिपे हुए,
मनमें विचार करने लगे कि
हे भाई अब मै क्या करू?
इनका दुःख कैसे दूर करूँ?॥

उसी समय बहुतसी स्त्रियोंको संग लिए रावण वहाँ आया।
जो स्त्रिया रावणके संग थी,
वे बहुत प्रकार के गहनों से बनी ठनी थी॥

रावण सीताजी को भय दिखाता है

बहु बिधि खल सीतहि समुझावा।
साम दान भय भेद देखावा॥
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी।
मंदोदरी आदि सब रानी॥

उस दुष्टने सीताजी को अनेक प्रकार से समझाया।
साम, दाम, भय और भेद अनेक प्रकारसे दिखाया॥

रावणने सीतासे कहा कि हे सुमुखी!
जो तू एकबार भी मेरी तरफ देख ले तो हे सयानी,
मंदोदरी आदि सब रानियो को॥

सीताजी तिनके का परदा बना लेती है